बिना तो वस्तुतः श्रीकृष्ण के मर्म में प्रवेश ही नहीं हो सकता। यहाँ **तु** शब्द का प्रयोग विशेष रूप से यह संकेत करने के लिये है कि श्रीकृष्ण के तत्त्वबोध के लिये किसी अन्य साधन का उपयोग अथवा विधान नहीं किया जा सकता और न ही कोई अन्य साधन इसमें सफल हो सकता है।

श्रीकृष्ण के द्विभुज और चतुर्भुज, दोनों स्वयंरूप अर्जुन को दिखाये अस्थायी विश्वरूप से सर्वथा भिन्न हैं। चतुर्भुज रूप नारायण हैं और द्विभुजरूप स्वयं श्रीकृष्ण हैं। अर्जुन के प्रति प्रकटित अस्थायी विश्वरूप की अपेक्षा ये दोनों रूप शाश्वत और अलौकिक हैं। **सुदुर्दशनम्** शब्द का अभिप्राय है कि इससे पहले किसी ने भी उस विश्वरूप का दर्शन नहीं किया था। इससे प्रतीत होता है कि भक्तों के लिये उस रूप का दर्शन आवश्यक नहीं है। अर्जुन का अनुरोध था, इसीलिए श्रीकृष्ण ने उसे दिखाया, जिससे भविष्य में जब भी कोई मनुष्य अपने को भगवत्-अवतार कहने का दुस्साहस करे तो इसके प्रमाण में जनता उसे अपना विश्वरूप दिखाने को कह सके।

श्रीकृष्ण ने विश्वरूप से चतुर्भुजरूप और उसके बाद फिर अपना मूल द्विभुज-रूप धारण किया है। इससे प्रकट होता है कि वेदों में वर्णित चतुर्भुज आदि सारे रूप द्विभुजधारी श्रीकृष्ण से ही उद्भावित होते हैं। अतएव श्रीकृष्ण सम्पूर्ण प्रादुर्भावों के मूल हैं। निर्विशेषतत्त्व के सम्बन्ध में तो कहना ही क्या है, श्रीकृष्ण तो इन चतुर्भुज रूपों से भी विशिष्ट हैं। श्रीकृष्ण के चतुर्भुजधारी रूपों के सम्बन्ध में शास्त्रों का कहना है कि श्रीकृष्ण के स्वयंरूप से सबसे अधिक समानता वाला चतुर्भुजरूप भी (जो कारणोदकशायी महाविष्णु कहलाता है और जिसके श्वास-निःश्वास के साथ असंख्य ब्रह्माण्डों का प्राकट्य और लोप होता रहता है) उनका अंशमात्र है। इससे निश्चय होता है कि सच्चिदानन्दघन भगवान् के रूप में श्रीकृष्ण के द्विभुज स्वयंरूप की ही आराधना करनी चाहिए। वे सम्पूर्ण विष्णुमूर्तियों के उद्गम, सब अवतारों के अवतारी स्वयं भगवान् हैं, जैसा भगवद्गीता में अन्यत्र भी प्रमाण हैं।

वैदिक शास्त्रों में कथन है कि अद्वय परमसत्य एक पुरुष-विशेष हैं। उनका नाम कृष्ण है और कभी-कभी वे इस पृथ्वी पर भी अवतरित होते हैं। श्रीमद्भागवत में श्रीभगवान् के भिन्न-भिन्न अवतारों का वर्णन है। उसी प्रकरण में कहा है कि श्रीकृष्ण किसी के अवतार नहीं हैं, वरन् सब के अवतारी स्वयं भगवान् हैं। **कृष्णस्तु भगवान् स्वयं।** भगवद्गीता में वे स्वयं कहते हैं, **मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्तिः** मेरे कृष्णरूप से श्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है, तथा **अहमादिर्हि देवानाम्**, मैं सम्पूर्ण देवसमुदाय का आदिकारण हूँ।' श्रीकृष्ण से भगवद्गीता को ग्रहण करके अर्जुन ने भी इस तथ्य की पुष्टि की है, **परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्**, 'मैं अब पूर्ण रूप से जान गया हूँ कि आप स्वयं भगवान् परमसत्य तथा सम्पूर्ण जगत् के आश्रय हैं, इन सब प्रमाणों से सिद्ध हो जाता है कि श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिखाया गया विश्वरूप उनका आदि रूप नहीं है, द्विभुज कृष्णरूप ही आद्य है। सहस्रों मुख-भुजाओं वाला विश्वरूप उन्हीं को आकृष्ट करने के लिए